

## अध्याय - 1

रहस्यवाद : स्वरूप और विकास – हिन्दी काव्य  
के संदर्भ में



## अध्याय - 1

### रहस्यवाद : स्वरूप और विकास - हिन्दी काव्य के संदर्भ में

---

विशाल विश्व में सबकुछ परिवर्तनशील है। समय बदलता है, ऋतुएँ आपस में बदलती हैं, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों में बदलाव आता है, तो मूल्यबोध, नैतिकताबोध में भी परिवर्तन होता है। अतः मानस में भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। इसी क्रम में साहित्य में युगांतर पैदा होता है। शुक्लजी ने सही कहा है – “जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है, तब यह निश्चित है की जनता चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।.....जनता की चित्तवृत्ति साहित्यिक, राजनीतिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है।”<sup>1</sup>

जगत के दो हिस्से होते हैं (1) दृश्य (2) अदृश्य । दृश्य जगत में जो अब दृश्य है और सत्य है वह थोड़े दिनों के बाद बदल जाता है और उसका सत्य कुछ और हो जाता है। अदृश्य जगत के बारे में कहना अधिकतर अनुमान और अनुभव पर आधारित होता है। इसलिए बहुत सारी चीजें अविदित रहती हैं। अविदित वस्तु, तथ्य या तत्व या घटना कुछ भी हो वह रहस्यावृत्त होती है। मनुष्य जिज्ञासु होता है और यह जिज्ञासा वास्तव में अविष्कार की जननी होती है। अधिक जिज्ञासा अविदित या रहस्यपूर्ण चीजों के बारे में होती है। साहित्य में अनादिकाल से रहस्य की चर्चा होती रही है। जिज्ञासु मनुष्य रहस्य का भेद करना चाहता है। इसी क्रम में विभिन्न क्षेत्रों से संबद्ध तरह-तरह के रहस्यों का अविष्कार होता है। अविदित चीजों के बारे में जिज्ञासा और कौतूहल पैदा होने के कारण चिंतन और उसकी अभिव्यक्ति ही साहित्य में रहस्य कहलाता है। उन्हें जानना और प्रस्तुत करना शोध का अनिवार्य अंग होता है।

साधारणतः रहस्य से जुड़ा हुआ वाद रहस्यवाद है। रहस्यवाद उतना ही पुरातन है, जितना स्वयं मनुष्य और प्रकृति। यह प्रवृत्ति मनुष्य की प्रकृति का अविभाज्य अंग रही है और रहस्यानुभूति मनुष्य की श्रेष्ठतम अनुभूति। इसकी अभिव्यक्ति सभ्यता के प्रायः सभी स्तरों, देशों और कालों में होती रही हैं। डा.राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार – “पाषाणयुग में ही इस भावना का उदय हो गया था। मनुष्य को सभ्य और संस्कृत दशाओं से पूर्व बर्बरावस्था में ही निहित शक्ति का सहज बोध हुआ था .....मनुष्य अपने सभ्य और संस्कृत स्तरों पर इस प्रवृत्ति का अनुभूतिगत और विचारगत परिष्कार करता गया।”<sup>2</sup> अर्थात् रहस्यवाद का सम्बन्ध रहस्य के उस अनुभव से है जब साधक अपनी अपरोक्ष अनुभव के द्वारा उस सत्य या परम तत्त्व के प्रत्यक्ष दर्शन को अनुभूत करता है। अनुभूति के उस क्षण में साधक असीम आनंद से अभिभूत हो, उस अनंत सत्य, शिव और सुंदर तत्त्व के साथ जुड़ाव का अनुभव करता है। ‘हिंदी साहित्य कोश’ के अनुसार, “अनुभूति के उन परम क्षणों में आत्मा एक नयी शक्ति से ओत-प्रोत, नूतन और असीम आनंद से आक्रांत और अभिभूत, एक अनंत सुहृद् शिव और सुंदर तत्त्व में निमज्जित, मुक्त और पवित्रीकृत अनुभव करती है।”<sup>3</sup>

रहस्य मूल संस्कृत का ‘रहस’ शब्द है। रह धातु का अर्थ है त्याग करना, इसके आगे असुन प्रत्यय लगाने से ‘रहस’ शब्द बना है। इसका अर्थ है - भेद की बात, एकांत, गुह्य आदि। रहस्य का अंग्रेजी शब्द mystery है। Mystery का सामान्य अर्थ – छिपी हुई बात, गुप्त बात या भेद है। अंग्रेजी में Mystery, Mystic और Mysticism का प्रयोग है। हिंदी में 1920 ई० से सामानांतर रूप से रहस्य, रहस्यानुभूति और रहस्यवाद का प्रयोग प्रचलन में आ गया। हिंदी साहित्य में रहस्यवाद शब्द का प्रयोग साधारणतः मध्ययुगीन निर्गुण भक्त कवियों और आधुनिक छायावादी कवियों के सन्दर्भ में आता है। मराठी में इसके लिए ‘गूढवाद’ या ‘गूढ गुंजन’ तथा बंगला में इसके लिए ‘मरमियावाद’ शब्द का प्रयोग मिलता है। Oxford Dictionary के अनुसार mystery के सामान्य

अर्थ - “कोई गुप्त या छिपी हुई बात, कोई ऐसी बात जो मानव - बुद्धि की समझ के बाहर हो या कोई व्यक्तिगत गुप्त बात, आदि हैं।”<sup>4</sup> Mystery का ही परिवर्तित शब्द mystic है जिसका Shorter Oxford Dictionary के अनुसार अर्थ - “ i - अध्यात्म सम्बन्ध, ii - किसी प्राचीन धर्म, ज्ञान, तंत्र विद्या आदि से सम्बंधित, iii - गुप्त, अज्ञात, iv - आत्मा और परमात्मा के सीधे तादात्म्य से सम्बन्धी, आध्यात्मविद्या सम्बन्धी।”<sup>5</sup> इसी प्रकार Mysticism का अर्थ उसी डिक्शनरी में, “ i - रहस्यवादी व्यक्ति के विचार, धारणाएँ, प्रवृत्तियाँ, आदतें, अनुभूतियाँ आदि। ii - उल्लास चिंतन के द्वारा दिव्य शक्ति से तादात्म्य की संभावना में विश्वास।”<sup>6</sup> दूसरी ओर नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा मूल संपादित ‘संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर’ में भी रहस्य, रहस्यवाद और रहस्यवादी का अर्थ इस प्रकार है - “ रहस्य - i - गुप्त भेद, गोप्य विषय। ii - मर्म या भेद की बात। iii - वह जिसका तत्व सहज में समझ में न आ सके। iv - हंसी, मजाक। रहस्यवाद - i - ध्यान चिंतन के द्वारा परोक्ष सत्ता में तल्लीन होने का प्रयत्न। ii - ऐसी अंतर्दशा में व्यक्त भावनाएँ। रहस्यवादी - i - रहस्यवाद का अनुयायी। ii - रहस्यवाद संबंधी।”<sup>7</sup> अर्थात् Mystery, Mystic, Mysticism ये तीनों समानांतर शब्द हैं, जिसका प्रतिनिधित्व हिंदी का रहस्य, रहस्यवादी और रहस्यवाद शब्द करता है।

रहस्यवाद का सम्बंध रहस्यानुभूति से है जब साधक अपनी अपरोक्ष अनुभूति के माध्यम से उस परम सत्य का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करता है। रहस्य के विचार पक्ष को हम रहस्यवाद और उसके अनुभूति पक्ष को रहस्यानुभूति कह सकते हैं। कहा जाता है कि यह मनुष्य की एक उदात्त अनुभूति है। यह मनुष्य की चेतना को स्वतः अपने भीतर, मूल उत्स की ओर जाने को विवश करती है और साधक सामान्य जीवन के विषयों से विरक्त हो जाता है। रहस्यवाद का क्षेत्र आध्यात्मिक है और उसका सम्बन्ध एक विशेष अनुभूति से है जहाँ साधक आत्मा परमात्मा से एकत्व को अनुभूत करता है। कभी-कभी अनुभूति के क्षण

में साधक को अलौकिक ज्योति के दर्शन होते हैं और वह चरम आनंद को प्राप्त करता है। सच्ची रहस्यानुभूति से साधक के जीवन में दिव्य परिवर्तन होता है और उदात्त विचार, असीम प्रेम, करुणायुक्त चरित्र, अभिमान से रहित पवित्र जीवन साधक का अवश्यम्भावी परिणाम होता है। आज विश्व का सबसे बड़ा रहस्य वह परम सत्ता है, जो अज्ञात और अगोचर है। जिसने इस सृष्टि का सृजन किया, उसे जानने की प्रबल लालसा सहस्राब्दियों से मानव मन में व्याप्त रही है। बावजूद वह अदृश्य, अज्ञेय बना हुआ है। रहस्यवाद का संबंध इसी अदृश्य, अज्ञेय सत्ता से है। जब मनुष्य परमतत्त्व से एकाकार की अनुभूति को भाषा के माध्यम से व्यक्त करता है उसे साहित्यिक शब्दावली में रहस्यवाद कहते हैं। यह भावना प्राचीन है, लेकिन आधुनिक युग में भी यह विद्यमान है और छायावादी काव्य में इसकी विद्यमानता सर्वाधिक ध्यानाकृष्ट करती है। डा. नामवर सिंह के अनुसार – “हिंदी साहित्य में रहस्यवाद शब्द का प्रयोग 1920 ई० से पहले नहीं दिखाई पड़ता है। जब मुकुटधर पाण्डेय, सुमित्रानंदन पंत, जयशंकर प्रसाद की नवीन कविताएँ प्रकाश में आयीं तो उनकी आलोचना-प्रत्यालोचना के सिलसिले में ‘रहस्यवाद’ शब्द का प्रयोग किया गया। कवीन्द्र रवीन्द्र की अंग्रेजी ‘गीतांजलि’ को देशी विदेशी आलोचकों ने ‘मिस्टिक’ कहा था, इसलिए हिंदी में भी उस तरह की कविताओं को ‘मिस्टिक’ और उसमें निहित भावधारा को ‘मिस्टिसिज्म’ समझकर उनके लिए हिंदी शब्द ‘रहस्यवाद’ चलाया गया।”<sup>8</sup>

रहस्यानुभूति और रहस्यवाद के स्वरूप को व्याख्यायित करते हुए विद्वानों ने अपनी-अपनी परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं। कतिपय उदाहरण दृष्ट्य हैं –

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार – “छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, जहाँ उसका संबंध काव्यवस्तु से होता है अर्थात् उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलंबन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है।”<sup>9</sup> अर्थात् रहस्यवाद

का संबंध मूलतः उस भावना से है, जहाँ साधक असीम सत्ता से रागात्मक संबंध की अनुभूति कर उसकी अभिव्यक्ति रहस्यमयी भाषा में करता है, शुक्ल जी के विचार से रहस्यवाद है।

2. डा० रामकुमार वर्मा के अनुसार – “रहस्यवाद जीवात्मा की उस अंतर्निहित प्रवृत्ति का प्रकाशन है जिनमें दिव्य और अलौकिक शक्ति से अपना शांत और निश्चल संबंध जोड़ना चाहती है।”<sup>10</sup> वर्मा जी स्पष्टतः रहस्यवाद को बाहरी नहीं आंतरिक विषय मानते हैं। इनके अनुसार जीवात्मा-परमात्मा के संबंध में इसकी सत्ता की स्वीकृति है।

3. गणपति चन्द्र गुप्त के मतानुसार – “यह एक विशेष प्रकार की मानसिक चेतना है जिसमें व्यक्ति अन्तेर्मुखी होकर बाह्य जगत की अपेक्षा अंतर्जगत को, बौद्धिकता की अपेक्षा भावात्मकता को, यर्थाथ की अपेक्षा कल्पना को, सत्य की अपेक्षा सौन्दर्य को, परम्परा की अपेक्षा नूतनता को एवं संघर्ष की अपेक्षा प्रेम को अधिक महत्त्व देने लगता है।”<sup>11</sup> गुप्त जी रहस्यवाद को आन्तर्जागतिक वस्तु मानते हैं जिसमें अपेक्षया अधिक महत्त्व भावात्मकता, काल्पनिकता, सुन्दरता, नवीनता तथा प्रेम का है।

4. कवि जयशंकर प्रसाद के अनुसार – “काव्य की आत्मा की संकल्पनात्मक मूल अनुभूति की मुख्य धारा रहस्यवाद है।”<sup>12</sup> प्रसाद जी की यह परिभाषा अनुभूति पर केन्द्रित है और अस्पष्ट भी अतिव्याप्ति के कारण।

5. कवयित्री महादेवी के अनुसार – “असीम का ससीम से संबंध रहस्यवाद है।”<sup>13</sup> महादेवी वर्मा अनंत और सांत के सम्बन्ध को रहस्यवाद बताती हैं।

6. डा० राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार – “रहस्यवाद रहस्यदर्शियों का वह सांकेतिक कथन या वाद है – जिसके मूल में अखंडानुभूति और तत्त्वानुभूति निहित है।”<sup>14</sup> त्रिपाठी जी रहस्यवाद को सांकेतिक उक्ति मानते हैं, जिसमें अनुभूति की अखंडता व तत्त्वात्मकता संनिविष्ट है।

7. इस सन्दर्भ में गंगा प्रसाद पाण्डेय का कथन है – “चिंतनमय दार्शनिक जगत का अद्वैतवाद भावनामय काव्यजगत का रहस्यवाद है।”<sup>15</sup> पाण्डेय जी की परिभाषा में अद्वैत भावना की अभिव्यक्ति है। अद्वैतवाद दर्शन का विषय है और साहित्य भावना का। अतः साहित्य में इसकी संनिहितता के विचार से रहस्यवाद है।

उपयुक्त परिभाषाओं का निचोड़ निम्नलिखित -

- अद्वैतवाद का ही दार्शनिक आधार रहस्यवाद है।
- रहस्यवाद का संबंध साधक की उस मूल संवेदना से है, जहाँ साधक (ससीम) उस परम सत्ता या अनंत (असीम) से रागात्मक सम्बन्ध की अनुभूति करता है।
- इस अवस्था में साधक अंतर्जगत से संबंध स्थापित कर अन्तर्मुखी हो जाता है और वह बाह्य जगत की अपेक्षा अंतर्जगत को अधिक महत्व देता है।
- यहाँ आत्मा परमात्मा की अखंडता को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में स्वीकार किया गया है। रहस्यवादी दर्शन का आधार आत्मा-परमात्मा की एकता का निष्पादन करना है।
- रहस्यवाद एक तरह का मानसिक व भावात्मक दृष्टिकोण है।

आत्मा परमात्मा की अखंडता में आस्था रखने वाले विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ने कहा है – “मेरा एक टुकड़ा मन यदि मेरा होता तो मन के साथ मन का योग न होता। मन पदार्थ जगत व्यापी है। मेरे भीतर बद्ध होने के कारण वह खण्डित नहीं है। समस्त मनो के भीतर एक ऐक्यतत्व है।”<sup>16</sup> क्षितिमोहन सेन के माध्यम से रवीन्द्रनाथ हिंदी संत काव्य से परिचित थे। जाहिर है कि हिंदी संत काव्य में रहस्यात्मकता एक प्रवृत्ति विशेष के अर्थ में आती है। ये रहस्यात्मकता कहीं न कहीं उपनिषदीय रहस्यवाद से सम्बंधित है। ब्राह्मण होने के कारण रवीन्द्रनाथ को भारतीय उपनिषदीय परम्परा का गहरा

ज्ञान था। कबीर से उनको लगा कि, दर्शन का बिषय कैसे भाव में बदलकर काव्य का विषय बन सकता है। इस परिप्रेक्ष्य में उनकी 'गीतांजलि' श्रेष्ठ दिग्दर्शन है।

वस्तुतः रहस्यवाद मानव जगत की एक विशेष अवस्था है। जहा साधक ससीम से असीम, द्वैत से अद्वैत, स्थूल से सूक्ष्म, मूर्त से अमूर्त तथा आत्मा से परमात्मा के साथ रागात्मकता एवं एक्यानुभूति को अनुभव करता है।

### रहस्य और रहस्यवाद में अंतर :

साधारणतः रहस्य रहस, गूढ तत्व, भीतरी या छिपी बात, मर्म की बात, गुप्त भेद आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है और एक तरह साधन रूप होता है। विशिष्ट अर्थ में या साध्य रूप में यह विचार अथवा वाद का रूप प्राप्त करता है। इसलिए रहस्य और रहस्यवाद में अंतर होता है। आधुनिक काल के हर युग में खोजेंगे तो रहस्य का प्रयोग कहीं न कहीं उपलब्ध हो जायेगा किन्तु उसे रहस्यवाद की व्याख्या नहीं दी जा सकती है। मध्यकाल के बाद वाद रूप में इसकी स्थापना छायावादियों ने की और कहने की आवश्यकता नहीं कि सबसे अधिक इसका प्रयोग महादेवी ने किया।

### रहस्यवाद के अवयव :

इस विश्व में हर वस्तु कार्य-कारण संबंध से जुडी रहती है। कहा जाता है कि बिना कारण पत्ता तक नहीं हिलता। रहस्यवाद इसका अपवाद नहीं है। यह अगर कार्य है तो इसके कारण है; इसकी प्रक्रिया है; इसके अवयव या अंग अथवा तत्व हैं। गंपतिचंद्र गुप्त ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' (भाग-2) में इसका विश्लेषण करते हुए इसकी निम्नांकित अवस्थाएँ बतायी हैं; जैसे – 1. जिज्ञासा – अज्ञात को जानने की इच्छा यानी ईश्वर और अध्यात्म का परिचय पाने की कवायद। 2. आस्था – उस अज्ञात के प्रति दृढ़



विश्वास। 3. अद्वैत भावना – साधक का अद्वैत सम्बन्ध या एकता की भावना का अनुभव करना। 4. विरहानुभूति – अपने प्रियतम की अप्राप्ति में हो रहा दुख या कष्ट। 5. संयोगानुभूति – अन्त में साधक परमात्मा या प्रियतम के साथ तादात्म्य स्थापन में सफल होना। निष्कर्ष रूप में गुप्त जी कहते हैं कि रहस्यवादी समस्त अवस्थाओं तक पहुँचने में कामयाब हो – यह जरूरी नहीं है।

वस्तुतः रहस्यवाद के दो प्रमुख अवयव होते हैं, जैसे – 1. आधार या आश्रय, अवलम्ब, कारण, आलम्बन 2. आधारी, साधक। इनके क्षेत्र बड़े व्यापक होते हैं – अणु से लेकर परमाणु तक, विषय या वस्तु से लेकर मन तक।

### रहस्यवाद के लक्षण :

1. अलौकिक शक्ति में आस्था
2. असीम आनंद के प्रति जिज्ञासा, अद्वैत भावना
3. परमात्मा के साथ रागात्मक संबंध
4. भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति

प्रसाद ने कहा है –

“हँसता रहे उसे सविलास शक्ति का क्रीडामय संसार”

(कामायनी – श्रद्धा सर्ग)

संसार की यह शक्ति अपनी चिंतन परम्परा में दो भागों में विभाजित है – 1. लौकिक शक्ति 2. अलौकिक शक्ति। लौकिक शक्ति की विद्यमानता असंदिग्ध होती है किन्तु अलौकिक शक्ति रहस्यवृत्त होती है। रहस्यवादी के लिए अलौकिक शक्ति में आस्था का होना आवश्यक है। रहस्यवादी किसी भी धर्म, सम्प्रदाय या दर्शन का अनुसरण करनेवाला हो, वह यह मानता है कि आत्मा – परमात्मा अद्वैत है अर्थात् एक है। रहस्यवादी के हृदय में परम सत्ता के प्रति दृढ अनुराग और विश्वास का होना आवश्यक होता है। आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार – “ वह ‘में’ और ‘तू’ का भेद नहीं जानती ; वह सादृश्य एवं साम्य को भी नहीं जानती। वह केवल एक का अस्तित्व मानती है ; जहाँ समस्त भेद बिखरकर

निश्चेष हो जाते हैं। इसलिए रहस्यवादी सीमा से परे असीम की खोज में रहता है।”<sup>17</sup> प्रत्येक तत्त्वज्ञानी साधक आत्मा और परमात्मा की अभिन्नता को स्वीकार करता है किन्तु दर्शन के मूल में रागात्मक संबंध की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। उस परम सत्ता के साथ एकाकार की अनुभूति को प्राप्त करने के लिए, उस सत्ता से प्रेम का होना आवश्यक होता है।

संसार, भौतिक जगत जितना राग का है उतना विराग का भी है। आत्मा - परमात्मा का संबंध रागात्मक होने के कारण भावात्मक है। विश्वास इसमें मध्यस्थता की भूमिका अदा करता है। हमारी परंपरा में यह स्वीकृत है कि, आत्मा परमात्मा का अंश है। आत्मा परमात्मा से मिलना चाहती है और उस मिलन में सांसारिक चीजें बाधक बनती हैं। साधक उन बाधाओं का अतिक्रमण कर वहाँ तक पहुँचने का प्रयास करता है। परमात्मा के प्रति उसकी आस्था, उसका विश्वास, उसकी दृढ निश्चयता, भरोसा, मन की सारी इच्छाओं की पूर्ति की शक्ति सम्पन्नता आदि गुणों के कारण वह सदैव उसके प्रति आकर्षित रहता है। उसका दिव्य सौंदर्य उसे अविभूत करता है। वह उसके प्रति अनुरागी बन जाता है, दृढ अनुराग साधक का संबल होता है। इस अनुराग के बिना परमात्मा का साक्षात्कार असंभव है। महादेवी का कथन है कि, “हृदय के अनेक रागात्मक संबंधों में माधुर्यभावमूलक प्रेम ही इस सामंजस्य तक पहुँच सकता है, जो सब रेखाओं में रंग भर सके, सब रूपों को सजीवता दे सके और अत्मनिवेदक को इष्ट के साथ के साथ समता के धरातल पर खड़ा कर सके।”<sup>18</sup>

रवीन्द्रनाथ एवं महादेवी के काव्य के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि परमात्मा के प्रति अटल अनुराग इनके कवित्व की शक्ति है। तभी तो रवीन्द्रनाथ कहते हैं -

“तुम विश्व से जुड़कर जहाँ विहार करते हो  
वही तुम्हारे साथ मेरा भी संबंध है।  
यह संबंध वन में नहीं, निर्जन में नहीं,

मेरे अपने मन में भी नहीं है,  
जहाँ तुम सबके अपने हो,  
हे प्रिय, वहीं तुम मेरे भी हो।”<sup>19</sup>

( गीतांजलि , गीत संख्या - 94 )

दूसरी ओर महादेवी कहती हैं –

“चित्रित तू मैं हूँ रेखा – क्रम,  
मधुर राग तू मैं स्वर – संगम  
तू असीम में सीमा का भ्रम,  
काया छाया में रहस्यमय !  
प्रेयसि प्रियतम का अभिनय क्या ?”<sup>20</sup>

(नीरजा, गीत संख्या - 12 )

अर्थात् रहस्यवादी साधक के लिए परम सत्ता से रागात्मक संबंध की अनुभूति आवश्यक है।

भाषा भाव की अनुगामिनी होती है। भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं, साधक के जीवन का पर्याय होती है। साधक रहस्यानुभूति के भेद -चिंतन के स्तर पर जिस माध्यम से करता है, वह है भाषा। गूढ़, गंभीर रहस्यानुभूति की अभिव्यक्ति सदैव सहज सरल भाषा में ही संभव है। अनुभूति का स्तर जैसा होगा भाषा का स्तर वैसा ही होगा। अतः रहस्यवादी साधक के लिए अपनी अनुभूति को भाषा के माध्यम से प्रकट करना आवश्यक होता है। “अनुभूतियों का प्रकाशन हँसकर, रोकर, नाचकर या गाकर – विविध प्रकार से किया जा सकता है, किन्तु रहस्यवाद के अंतर्गत उन्हीं अनुभूतियों का समावेश किया जाता है जो भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त की जाती हैं”<sup>21</sup>

विभिन्न विद्वानों के अनुसार किसी भी साहित्य को ‘रहस्यवादी’ मानने पर उसमें उपयुक्त लक्षणों का मिलना आवश्यक है।

## रहस्यवाद के भेद –

साधक किसी अन्य के वचन पर विश्वास न करके स्वयं अपनी प्रत्यक्ष अनुभूतियों पर विश्वास करता है। वह ईश्वर के अस्तित्व में केवल श्रद्धा ही नहीं रखता बल्कि वह उसके प्रत्यक्ष दर्शन का दावा भी करता है। अतएव साधक परमतत्त्व का साक्षात्कार, अंतर्जगत और बहिर्जगत दोनों रूपों में अनुभूति के स्तर पर करता है। विभिन्न विद्वानों ने रहस्यवाद को व्याख्यायित करते हुए उसके विभिन्न भेदोपभेद किए हैं। पाश्चात्य विद्वान स्पेर्जन ने रहस्यवाद के चार भेद स्वीकार किये हैं – 1. प्रेम और सौन्दर्य सम्बन्धी रहस्यवाद 2. दर्शन सम्बन्धी रहस्यवाद 3. धर्म और उपासना सम्बन्धी रहस्यवाद 4. प्रकृति सम्बन्धी रहस्यवाद। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भी रहस्यवाद के दो भेद मानते हैं – 1. साधनात्मक रहस्यवाद 2. भावात्मक रहस्यवाद। डा० गोविन्द त्रिगुणायक ने भी रहस्यवाद के चार भेदों की चर्चा की है – 1. आध्यात्मिक रहस्यवाद 2. प्रकृतिमूलक रहस्यवाद 3. प्रेममूलक रहस्यवाद 4. यौगिक रहस्यवाद।

रहस्यवाद के मूल में धर्म, दर्शन, प्रकृति, अलौकिक प्रेम आदि तत्त्व की प्रधानता होती है। परन्तु सिर्फ धर्म, दर्शन या प्रकृति अकेले रहस्यानुभूति नहीं प्राप्त कर सकता। इन सब के साथ रागात्मकता का होना आवश्यक होता है। अतः धार्मिक, दार्शनिक या साधनात्मक रहस्यवाद भी भावात्मक रहस्यवाद से अलग नहीं होता और रागात्मकता में ही भावात्मकता का भी समावेश हो जाता है। इसलिए ये सभी अलग – अलग भेद न होकर, समन्वित रूप से रहस्यवाद में साथ – साथ रहते हैं।

रहस्यवादी कवियों के साधारणतः दो भेद कर सकते हैं। एक वह जो वास्तविक जीवन में सच्चा साधक होता है, दूसरा वह जो संसारिकता से विरक्त होकर कल्पना के माध्यम से रहस्यवाद की सृष्टि कर लेता है। इन दोनों प्रकार के रहस्यवादियों को मूलतः 1. यथार्थ रहस्यवादी और 2. काल्पनिक रहस्यवादी

कहा जा सकता है। मध्यकालीन कवि – कबीर, दादू आदि में प्रथम कोटि का रहस्यवाद दिखाई पड़ता है। वे जीवन के अंत तक रहस्यवादी बने रहते हैं। काल्पनिक रहस्यवादी समय के साथ बदलते रहते हैं। आधुनिक युग के अनेक कवियों में दूसरे प्रकार का रहस्यवाद दिखाई पड़ता है।

### रहस्यवाद की विभिन्न अवस्थाएँ –

साधक का जब अलौकिक सत्ता में अटूट विश्वास होता है। तदुपरांत उस साधक में ईश्वर और उसकी सृष्टि को जानने, समझने की जिज्ञासा उत्पन्न होता है और इसी क्रम में साधक विभिन्न अवस्थाओं को पार कर अपने लक्ष्य तक पहुँचता है। इसी प्रकार के प्रश्न और जिज्ञासा हमें उपनिषद् में भी उपलब्ध होते हैं। अर्थात् साधक को अनेक प्रकार के भाव दशाओं को पार करते हुए आगे बढ़ना पड़ता है। सामान्यतः रहस्यवाद के विकास क्रम में पाँच अवस्थाएँ मानी गई हैं –

- जिज्ञासा
- आस्था
- अद्वैत भावना
- विरहानुभूति
- संयोगानुभूति

पहली अवस्था में साधक का परम सत्ता के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होता है। रहस्यानुभूति में परमात्मा को जानने की जिज्ञासा का भाव इसका प्रथम सोपान है। नामवर सिंह के अनुसार – “काव्य में रहस्य भावना एक प्रकार से ‘परोक्ष की जिज्ञासा’ है।”<sup>22</sup> उस अज्ञात की अनुभूति में, परम सत्ता को जानने का कौतुहल साधक में विद्यमान होता है। साधक अपने बोध की पकड़ से उसे आनंदस्वरूप हृदय में बसा लेता है। इसलिए कवि रवीन्द्र कह उठते हैं कि –

“न पाते तुम्हें देख ये नयन ,  
सभी नयनों में रहते तुम्हीं ।  
हृदय है जान न पाता तुम्हें ,  
हृदय में रहते हो गोपन ।”<sup>23</sup>

(गीत पंचशती में पूजा के अंतर्गत , गीत संख्या - 10)

अर्थात् अपनी सीमा में तुम्हें देख नहीं पाता हूँ पर यह बोध अवश्य है कि तुम कहीं न कहीं नयनों के अन्दर ही हो। हृदय तुम्हें समझ पाने में समर्थ नहीं है फिर भी यह विश्वास है कि तुम हृदय की निरवता ही छिपे हो। समस्त प्रकृति में साधक का उस अदृश्य सत्ता की उपस्थिति में विश्वास दृढ होता है। यह रहस्यवाद की दूसरी अवस्था है। तीसरी अवस्था में साधक उस सत्ता के साथ अद्वैत भावना की आकांक्षा को करता है। इस भावना के प्रबल होने पर वह उस सत्ता से विरह की अनुभूति को तीव्रता से अनुभव करने लगता है। विरह का ज्ञान होने पर वह चौथी अवस्था विरहानुभूति को प्राप्त करता है। इसके उपरांत साधक उस सत्ता के साथ एकीकृत होने में सफलता प्राप्त कर पाचवी अवस्था संयोगानुभूति तक पहुंच जाता है।

### भारतीय साहित्य में रहस्यवाद की परम्परा –

साहित्य की अपनी परम्परा में विभिन्न प्रवृत्तियाँ, विविध परम्पराएँ देखने को मिलती हैं और रहस्यवाद विभिन्न समय की विशेष प्रवृत्ति के रूप में दिखलाई पड़ता है। आदिकाल से आज तक मनुष्य की सभ्यता के विकास क्रम में ये प्रवृत्ति यत्र – तत्र उभरती रही है। आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार, “पाषाणयुग में ही इस भावना का उदय हो गया था। मनुष्य को सभ्य और संस्कृत दशाओं से पूर्व बर्बरावस्था में ही निहित शक्ति का सहज बोध हुआ था .....मनुष्य अपने सभ्य और संस्कृत स्तरों पर इस प्रवृत्ति का अनुभूतिगत और विचारगत परिष्कार करता गया।”<sup>24</sup> जिज्ञासा सामाजिक मनुष्य

की जन्मजात वृत्ति है। धरती में होने पर भी धरती की समस्त चीजें हमारी समझ में नहीं आतीं और ऐसा भी है कि समस्त चीजों को समझने की समझ भी सब में नहीं होती। हमारी जानकारी से परे बहुत सारी चीजें होती हैं। हम जानने का प्रयास तो करते हैं, किन्तु हमारी समझ की क्षमता की भी सीमा है। इसलिए बहुत सारी चीजें हमारे लिए अविदित रह जाती हैं। रवीन्द्रनाथ ने कहा है कि –

“इस बड़ी पृथ्वी को कितना भर जनता हूँ ?

देश – देश में, जाने कितने नगर हैं, कितनी राजधानियाँ हैं ?

मनुष्य की कितनी कीर्ति है ?

कितनी नदियाँ हैं, कितने पहाड़ ?

कितने समुद्र, कितने रेगिस्तान हैं ?”<sup>25</sup>

(सम्मिलित गान, ऐकतान)

वे यह संकेत करना चाहते हैं कि जो चीज हमारे लिए अविदित है, वही हमारे लिए रहस्य है। इसका क्षेत्र अनंत हैं। वस्तुजगत से लेकर मनोजगत तक इसकी व्याप्ति है। रवीन्द्रनाथ का कहना है कि – “अपने अंतर में हम सबसे अधिक अगोचर हैं।”<sup>26</sup>

रहस्यवाद और रहस्यवादी साधना का प्रमुख देश भारत रहा है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक इस देश में रहस्यवादी साधना चलती रही है। रहस्यवाद का पूर्ण विकास बहुत बाद में दिखलाई पड़ता है, किन्तु उसके कुछ तत्व हमारे प्राचीनतम ग्रन्थ, ऋग्वेद में उपलब्ध हुए हैं—

“को अद्वावेद ! क इह प्रवोचत् ; कुत आजाता,

कुत इयं विसृष्टि : ?

अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा, को वेद यत

आबभूव !

इयं विसृष्टियर्त आबभूव, यदि व दधे वदि

वा न।

यो अस्याध्यक्ष परमे व्योमन् सो अङ्ग वे  
यदि वा न वेद।”<sup>27</sup> ( ऋग्वेद १०\१२९\६७ )

अर्थात् कौन ठीक – ठीक बता सकता है कि इस सृष्टि का आरम्भ कब हुआ, कैसे हुआ। इस सृष्टि का निर्माण स्वतः हुआ या किसी ने किया ? यह सब कुछ वह परम सत्ता, ईश्वर ही जानता है या नहीं, यह कौन कह सकता है।

ऋग्वेद में रहस्य के संकेत अधिक मात्रा में नहीं मिलते बल्कि यहाँ प्रारंभिक जिज्ञासा ही मिलती है। किन्तु आगे चलकर उपनिषद् में हमें उस अद्वैत का दर्शन होता है, जो रहस्यवाद का मूलाधार है। उपनिषद् भारतीय रहस्यवाद का हृदय है। उपनिषद् का दर्शन ‘वेदांत’ दर्शन के नाम से भी जाना जाता है। यह वेद का अंतिम भाग है। इसका प्रमुख सिद्धांत है ‘ सम्पूर्ण विश्व के व्यक्त सौंदर्य में ब्रह्म ही चेतन शक्ति के रूप में स्थित है। इसी ब्रह्म को अनंत, अगोचर, अव्यक्त, अरूप, सूक्ष्म कहा गया है। उपनिषद् में ही परम सत्ता और आत्मा के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। वह परम तत्त्व एक और अद्वितीय, शांत और अनंत, सत् – चित – आनंद, समस्त जगत का नियामक ब्रह्म है। “छांदोग्य उपनिषद् में आत्मा और परमात्मा की एकता को व्यक्त करते हुए कहा गया है – तात्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि ( वह सत्य है, वह आत्मा है, वह तू है!)”<sup>28</sup> वस्तुतः उपनिषदों में अद्वैत ज्ञान का विकास मिलता है, किन्तु कोई एक सुस्पष्ट दार्शनिक विचारधारा नहीं मिलती। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, बल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य आदि आचार्यों ने अपनी – अपनी दार्शनिक मान्यताओं के अनुसार उपनिषदों का विस्तृत व्याख्या किया है। वस्तुतः उसमें सर्वेश्वरवाद, अद्वैतवाद, द्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, आदि सभी मतों के अनुकूल उक्तियाँ मिल जाती हैं। मूलतः उपनिषद् का आग्रह प्रत्यक्ष रहस्यानुभूति और ज्ञान प्राप्त करने पर है। उपनिषद् को ज्ञानमार्ग, निर्गुण उपासना का मूल स्रोत माना जाता है। इसके बाद विभिन्न तंत्र और योग से होती हुई यह धारा सिद्धों, नाथों बौद्धों और संतों आदि के यहाँ दिखाई पड़ती



रही हैं। डा० रामकुमार वर्मा के अनुसार - “सिद्ध साहित्य की रचना में हमें ‘रहस्यवाद’ का बीज मिलता है। हिंदी साहित्य में रहस्यवाद जिस प्रकार विकसित हुआ है उसे समझाने के लिए एक बड़ी महत्वपूर्ण पृष्ठभूमि उपस्थित करता है। उसमें जो मनोविज्ञान है, उसे यदि आधुनिक रहस्यवाद के मनोविज्ञान से मिलाया जाये तो हमें शताब्दियों से पोषित होने वाली मनोविज्ञानिक क्रियाओं की एक बड़ी मनोरंजक श्रृंखला मिलेगी। साहित्य के अन्वेषकों के लिए यह निमंत्रण किसी ‘एटहोम’ से कम आकर्षक नहीं।”<sup>29</sup>

रहस्यवाद की परम्परा प्राचीन से वर्तमान की एक लम्बी यात्रा है। बौद्ध साहित्य में वेद, उपनिषद की तरह ब्रह्म से साक्षात्कार सम्बन्धी रहस्यवाद नहीं मिलता। परन्तु यदि रहस्यवाद के क्षेत्र में पराबौद्धिक प्रज्ञा या बोधि की प्राप्ति तथा उसके लिए किये जाने वाले योगाभ्यास जैसे गुह्य साधना को भी स्वीकार कर लिया जाये तो वहाँ भी हमें रहस्यवाद का व्यवहारिक रूप मिल जायेगा। क्योंकि बौद्धों की यही योग साधना कालान्तर में भिन्न - भिन्न रूप धारण कर सिद्धों, नाथों और संतों के हठयोग के रूप में मिलते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार - “ बौद्ध धर्म एक प्रकार से नास्तिकवादी धर्म है। वह ईश्वर जैसे किसी परम तत्त्व और आत्मा में विश्वास नहीं करता और मानव जीवन का चरम ध्येय - सत्य का साक्षात्कार करना था उसे एकात्म हो जाना ही मानता है। बौद्ध धर्म में योगाभ्यास मानसिक एकाग्रता, समाधि जैसी दशा प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के साधनों की व्यवस्था है। बौद्ध धर्म में महायान शाखा में अमिताभ बुद्ध की उपासना आरम्भ होने से उसमें रहस्यवाद के सामान्य तत्त्व का समावेश हो गया था। उससे सम्बंधित तांत्रिक - साधनाओं में भी प्राकारांतर से रहस्यवादी तत्त्व थे और इन तत्त्वों का आधार मूलतः औपनिषदिक रहस्यवाद रहा था। इस प्रकार हमें बौद्ध - साहित्य में भी रहस्यवादी तत्त्वों का रूप मिल जाता है। परन्तु यह रहस्यवाद काव्य के क्षेत्र में नहीं दिखाई देता।”<sup>30</sup>

स्वानुभूति की अभिव्यक्ति में अस्पष्टता आ जाने से कवि की रचना में स्वाभाविक रूप से रहस्यमयता आ जाती है। वृहदारण्यक उपनिषद् में इस विचित्र दशा के वर्णन में किसी क्रिया एवं क्रियेतम के गढालिंगन के प्रतीक द्वारा किया गया। इसे सभी अन्य अनुभव को दबा देने वाला बताया गया है। अनुभव का अर्थ प्रत्यक्ष ज्ञान है और स्वानुभूति की स्थिति में आत्मा से अपनत्व का अनुभव होना उस वस्तु की अनुभूति का अर्थ निहित है जो परमतत्त्व है। दोनों की अनुभूति एक साथ और सम्मिलित रूप में होती है। इसी अभिन्नता के कारण हमें उनमें से किसी एक की सत्ता प्रतीत नहीं होती फलतः अनुभूत की एकता हमें स्पष्ट अभिव्यक्ति में और भी अक्षम कर देती है। हम एक प्रकार से मूकबद्ध हो जाते हैं। भागवतगीता में कहा गया है - “जैसे मनुष्य लौकिक दृश्य वस्तुओं को मन, बुद्धि और इंद्रियों के द्वारा इदं बुद्धि से देखता है, आत्मदर्शन वैसा नहीं है; आत्मा का देखना अद्भुत और अलौकिक है। जब एकमात्र चेतन आत्मा से भिन्न किसी की सत्ता ही नहीं रहती, उस समय आत्मा स्वयं अपने द्वारा ही अपने को देखता है। उस दर्शन में द्रष्टा, दृश्य और दर्शन की त्रिपुटी नहीं रहती, इसलिए वह देखना आश्चर्य की भाँति है।”<sup>31</sup> हमारा प्रत्यक्ष ज्ञान उस समय साधारण रूप से बढ़कर उस कोटि विशेष की अनुभूति में परिणत हो गया होता है जिसे ‘स्वाद’ या ‘मजा’ कहा जाता है। जिसे साहित्यिक शब्दावली के अनुसार ‘रस’ की संज्ञा दी गई है। परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार - “संतों की रचनाओं के संबंध में जिस रहस्यवाद की चर्चा की जाती है। वह स्वानुभूत की उपयुक्त, अस्फोट अभिव्यक्ति के कारण अस्तित्व में आता है। परमतत्त्व की प्रत्यक्ष अनुभूति हो जाने पर भी, उसके स्वानुभूति परक हो जाने के कारण तत् विषयक अभिव्यक्ति का अस्पष्ट एवं अधूरे रूप में ही होना संभव है किन्तु उनकी भाषा उनका पूरा साथ नहीं दे पाती। उनके वर्णन इसी कारण बहुधा गूढ बनते जाते हैं और स्रोता या पाठक उनसे केवल चकित होकर रह जाते हैं।”<sup>32</sup> मध्ययुग में रहस्यवाद की परम्परा में निर्गुण और सगुण शाखा का विशेष महत्त्व रहा

जिसमें नानक, रैदास, धर्मदास, कबीर, दादू, सूरदास, तुलसीदास, मीरा आदि प्रमुख हैं।

हिंदी के मध्यकालीन काव्य से होते हुए यह आधुनिक काल के छायावाद में स्पष्ट उजागर होती है। इस समय तक इसकी प्रेरणा स्रोत उपनिषद् ही रही। इस पर अनेक आलोचकों ने अस्पष्टता का आरोप लगाया। परन्तु यह सच है कि मानसिक उलझन जितनी अधिक होगी अस्पष्टता उतना ही सहज है। छायावादी प्रवृत्तियों को देखते हुए यहाँ तक कहा गया की, छायावाद को छायावाद ही कहा जाये या रहस्यवाद। हिंदी में छायावादी काव्यान्दोलन पर योरोप के रोमांटिक कविता का प्रभाव या फिर द्विवेदी युग की प्रतिक्रिया का परिणाम और शैली का परिवर्तन ही नहीं था। बल्कि उसके पीछे तत्कालीन देशव्यापी सांस्कृतिक नवजागरण की महत्वपूर्ण भूमिका थी। फलस्वरूप छायावादी कविता पर युग - धर्म का प्रभाव रहा। छायावाद का उद्भव उस युग की अनिवार्यता के रूप में हुआ। दूसरी ओर रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, अरविन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर के दर्शन का प्रभाव भी छायावादियों ने ग्रहण किया। परन्तु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार - “ ईसाई संतों के छायाभास (फैंटसमाटा) तथा योरोपीय काव्यक्षेत्र में प्रवर्तित आध्यात्मिक प्रतीकवाद (सिंबालिज्म) के अनुकरण पर रची जाने के कारण बंगला में ऐसी कविताएँ ‘छायावाद’ कही जाने लगी थीं।”<sup>33</sup> संभवतः यहीं से छायावाद नाम हिंदी में आया।

इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देते हुए रवीन्द्रनाथ अग्रसर हुए जिन्होंने ‘गीतांजलि’ के दर्शन में अद्वैतवाद को भावात्मक स्तर पर प्रस्तुत करते हुए आधुनिक भारतीय काव्य में रहस्यवाद का परिचय कराया। इसका सही प्रयोग कवयित्री महादेवी के काव्य में मिलता है। महादेवी के पूर्व प्रसाद, पंत, निराला ने भी रहस्यवादी स्वर को ध्वनित कर चुके थे। इनके अतिरिक्त कबीर,

मीरा, दादू, सुर आदि संतो एवं भक्तों ने भी रहस्यवादी धारा के विकास में योग दिया है।

### हिंदी साहित्य में रहस्यवादी परम्परा –

हिंदी साहित्य की रहस्यवादी परम्परा को दो भागों में विभाजित कर देखा जा सकता है - (1) प्राचीन और (2) आधुनिक। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आधुनिक रहस्यवादी रचनाओं को प्राचीन रहस्यवादी परम्पराओं से प्रभावित न मानकर, उनपर विदेशी प्रभाव को स्वीकारते हैं। दूसरी ओर प्रसाद इसे शुद्ध रूप से भारतीय परम्परा की उपज मानते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार - “ ..... सूफियों के यहाँ से होता हुआ योरप में गया जहाँ कुछ दिनों पीछे ‘प्रतीकवाद’ से संश्लिष्ट होकर धीरे - धीरे बंगसाहित्य के एक कोने में आ निकला और नवीनता की धारणा उत्पन्न करने के लिए ‘छायावाद’ कहा जाने लगा। यह काव्यगत ‘रहस्यवाद’ के लिए गृहित दार्शनिक सिद्धांत का द्योतक शब्द है।”<sup>34</sup> इस युक्ति को कुछ सीमा तक स्वीकार किया जा सकता है। अतः रामचन्द्र शुक्ल इसे भारतीय काव्य पर रवीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रभाव से यूरोपीय प्रभाव मात्र मानते हैं।

हिंदी में सर्वप्रथम इस भावना के दर्शन सिद्ध - साहित्य में मिलता है। इसके उपरांत यह नाथ साहित्य से होते हुए निर्गुण सम्प्रदाय के रचनाकारों द्वारा आगे बढ़ती है। यद्यपि सिद्धों और नाथों का साहित्य अत्यंत अस्पष्ट है, बावजूद इसके परवर्ती संत - कवियों ने रहस्यवाद की प्रेरणा इन्हीं सिद्धों और नाथों से प्राप्त की थी। मध्ययुग में निर्गुण और सगुण धाराओं के रहस्यवादियों में कबीर, नानक, दादू, सूरदास, तुलसीदास, मीरा आदि की रहस्यवादी कृतियाँ तो हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। कबीर और जायसी हिंदी के आदि रहस्यवादी कवि माने गए हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को, जायसी में शुद्ध भावात्मक रहस्यवाद दिखाई पड़ता है। डा० श्यामसुंदर दास कबीर को हिंदी का रहस्यवादी कवि

स्वीकार करते हैं। डा० गणपतिचन्द्र गुप्त का भी अनुरूप विचार हैं, हिंदी के प्रथम रहस्यवादी कवि होने का गौरव महात्मा कबीर को प्राप्त है। हिंदी साहित्य में कबीर से पहले स्पष्ट रूप में अगोचर और अशरीरी ब्रह्म के साथ प्रणय की भावना नहीं थी। इनका रहस्यवाद अद्वैतवाद और सूफीमत से प्रभावित है इसलिए कबीर के रहस्यवाद में प्रेम की प्रधानता है। इन्होंने आत्मा को स्त्री रूप में स्वीकार कर परमात्मा रूपी पति की आराधना की है और जब तक पत्नी रूपी आत्मा पति रूपी परमात्मा से मिल नहीं जाती तब तक आत्मा विरहणी की तरह व्याकुल रहती हैं। अतः कबीर ने विरह और मिलन के माध्यम से रहस्यवाद की उत्कृष्टता को दिखलाया है। कबीर के बाद मीरा में अव्यक्त ब्रह्म के साथ प्रणय की भावना दिखाई पड़ता है। वे कृष्ण को पति मानकर उनसे प्रणय निवेदन करती हैं। जिसे कभी नहीं देखा, उनके प्रति दृढ संकल्प है - “जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई”। इस स्थिति में उनकी भावना रहस्यवादी हो उठती है। यद्यपि मीरा सगुण रूप कृष्ण के उपासिका थी। सगुण भक्तों में रहस्यवादी भावना स्पष्टतः दृष्टिगोचर नहीं होते। सगुण साधकों की रामाश्रयी एवं कृष्णाश्रयी शाखा के तुलसी और कृष्ण के कुछ पदों में हलकी-सी रहस्यभावना दिखाई पड़ती है। भक्तिकाल में रहस्यवादी प्रभाव पर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन स्पष्ट है कि, “हिंदी साहित्य में कबीर से पूर्व अव्यक्त और अशरीरी ब्रह्म के साथ प्रणय की भावना नहीं थी। कबीर के उपरांत मीरा में इसके दर्शन हुए। मीरा की भक्ति भावना और संतों की रहस्य भावना में कोई विशेष अन्तर नहीं है। यद्यपि मीरा सगुण - रूप कृष्ण की उपासिका थी। सगुण भक्तों में स्पष्ट रूप से रहस्यवाद के दर्शन नहीं होते। राम भक्ति शाखा के श्रेष्ठ कवि तुलसीदास और कृष्ण के उपासक सूरदास के कुछ पदों में हल्की - सी रहस्य भावना देखने को मिलती है। तुलसी के ‘ केशव कही न जाए का कहिए’ जैसे पदों में रहस्य - भावना अवश्य मिल जाती है। परन्तु वह ‘मादन - भाव’ वाली रहस्य - भावना नहीं है। इसी प्रकार सूर के काव्य भी कुछ स्थलों, जैसे रास, राधा, का कृष्ण के

हृदय में अपनी छाया देखकर मान करना, कृष्ण का 'यशोदा माता को मुंह खोलकर विराट स्वरूप दिखाना' तथा उनका 'बहुनायकत्व' आदि में पर्याप्त रहस्यात्मकता है। परन्तु उसका रहस्यभावना में अनुभूति की गहराई का प्रभाव है। कृष्ण के ऐसे रूप के प्रति भक्त का भाव प्रेम का न होकर आश्चर्य का ही है। इसका कारण यह है कि साकार रूप के उपासक भक्त उस अव्यक्त-अरूप सत्ता के प्रति क्यों आकर्षित होते ? अभिव्यक्ति रहस्यमय वहीं बन जाती है जहाँ उपासक के लिए उपास्य का रूप स्पष्ट न हो।”<sup>35</sup> इसके उपरांत रीतिकाल तक आते - आते रहस्यवादी प्रभाव क्षीण हो गया।

आधुनिक काल में रहस्यवाद का पुनरोदय वेदांत दर्शन के नवोत्थान के साथ ही आरम्भ होता है। 19वीं तथा 20वीं सदी में भारतीय दर्शन को नई परिभाषा देते हुए रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, अरविन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे चिंतकों और साधकों ने भारतीय जनता का ही नहीं वरन् विश्व के प्रबुद्ध विचारकों का ध्यान अपनी ओर खींचा। इनके अद्वैतवादी विचारों से जहाँ विश्व के प्रबुद्ध विचारक आकर्षित हो रहे थे वहीं भारतीय कवि और कलाकार का इनसे अछूता रहना संभव नहीं था। ऐसी स्थिति में बंगला के रवीन्द्रनाथ, इस क्षेत्र में अग्रसर हुए तथा दर्शन के अद्वैतवाद को भावात्मक स्तर पर 'गीतांजलि' में प्रस्तुत किया। वहाँ से इस धारा ने हिंदी के छायावादियों को प्रभावित कर रहस्यवादी बना दिया। हिंदी छायावाद के रहस्यवादी कवि प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी पर कवीन्द्र- रवीन्द्र द्वारा अंग्रेजी रहस्यवादी काव्य का अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। कवयित्री महादेवी के अनुसार - “छायावाद का कवि, धर्म के अध्यात्म से अधिक दर्शन के ब्रह्म का ऋणी है जो मूर्त और अमूर्त विश्व को मिलाकर पूर्णता पाता है। बुद्धि के सूक्ष्म धरातल पर कवि ने जीवन की अखंडता का भावन किया, हृदय की भाव - भूमि पर उसने प्रकृति में बिखरी सौंदर्य - सत्ता की रहस्यमयी अनुभूति की और दोनों के साथ स्वानुभूत सुख - दुखों को

मिलाकर एक ऐसी काव्य - सृष्टि उपस्थित कर दी जो प्रकृतिवाद, हृदयवाद, अध्यात्मवाद, रहस्यवाद, छायावाद, आदि अनेक नामों का भार संभाल सकी।”<sup>36</sup>

रहस्यवादी के हृदय में, उस परम सत्ता या चिरंतन प्रिय के प्रति विश्वास का होना आवश्यक होता है। हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार, यह विश्वास दो प्रकार से आता है -1. चिंतन - मन से और 2. भीतर की पीड़ा और व्याकुलता की अनुभूति के द्वारा। इस दृष्टि से छायावादी कवियों में प्रथम श्रेणी के रहस्यवादी कवि जयशंकर प्रसाद और दूसरी श्रेणी में महादेवी रही हैं। महादेवी के काव्य की मूल भावना ही अलौकिक प्रेम है और अलौकिक प्रेम में संयोग की अपेक्षा विरह भावना या पीड़ा के प्रधानता ही अधिक रहती है। प्रसाद की रहस्य - भावना दार्शनिक धरातल पर आधारित है। ‘कामायनी’ में मनु का प्रकृति से परिचय और मनु के मन में काम - भावना का उदय होना तथा श्रद्धा के द्वारा ज्ञान, इच्छा और क्रिया का मिलन, प्रसाद के दार्शनिक रहस्य भावना का ही प्रमाण हैं। निराला प्रकृति में ही शक्ति के विराट स्वरूप को देखते हैं। ‘राम की शक्ति पूजा’ में निराला की यह रहस्य भावना दिखाई पड़ता है। निराला ने तत्कालीन बंगला साहित्य की रहस्यवादी कविताओं का भी अध्ययन किया था। अतः निराला पर भी रहस्यवाद का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था और पंत भी इससे अछूते नहीं रहे। महादेवी का यह कथन सत्य प्रतीत होता है कि, “युगों के उपरांत छायावाद के प्रतिनिधि कवियों ने भी इस विचारधारा का विद्युत स्पर्श अनुभव किया और यह न कहना होगा कि उन्होंने इस परंपरा को अक्षुण्ण रखा। अनेक क्रूर विरोध और विवेकशून्य आघातों के उपरांत भी उनमें कोई दीनता नहीं, जीवन से उनका कोई सस्ता समझौता नहीं और कल्याण के लिए उनके निकट कोई अदेय मूल्य नहीं।”<sup>37</sup>

**नव्य रहस्यवाद –**

मनुष्य उत्तरोत्तर तर्कवादी, यर्थाथवादी बनता जाता है। उसकी आवश्यकताएं अनंत हैं और वह अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु नये - नये अविष्कार से जुड़ा रहता है। इसी क्रम में साहित्य में रहस्यवाद के स्वरूप में नयेपन का समाविष्ट होना स्वाभाविक है। भाषा और तथ्य दोनों दृष्टियों से नवीनता का आना स्वाभाविक था। आधुनिक नवजागरण काल में कई मनुष्यों के द्वारा वेदांत दर्शन की नई व्याख्या हुई। जिसमें दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, अरविन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि रहे हैं। यह भी माना जाता है कि, इस काल में पुराने सिद्धांतों को कोरा सिद्धांत न मानकर उनकी नई व्याख्याएँ दी गईं और उन्हें अधिक व्यवहारिक बनाया गया। इस संदर्भ में नव्य वेदांतवादी रामकृष्ण परमहंस उल्लेखनीय हैं। सहज ही ये बात उभरकर आती है, रहस्यवाद के क्षेत्र में नई व्याख्याओं और प्रयोगों के आधार पर नव्य रहस्यवाद का प्रचलन हुआ।

छायावादोत्तर कवियों में प्रयोगवादी अज्ञेय एवं प्रगतिवादी मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह जैसे कवियों की रचनाओं में भी रहस्यवादी चेतना दिखाई पड़ती है। इनकी रचनाओं को नव्य रहस्यवाद की श्रेणी में रखा जा सकता है। नव्य रहस्यवाद की संभावनाओं को देखते हुए, नये बौद्धिक स्तर पर इसकी नयी परिभाषा दी जाती है। रहस्य बुद्धि के लिए अव्याख्येय हैं। अज्ञेय का व्यक्तित्व 'दर्शन' की अपेक्षा 'विज्ञान' की ओर अधिक झुका है। आज विश्व विकास के लिए विज्ञान की ओर ही ताकत है, परन्तु एक सीमा तक पहुँच कर विज्ञान को भी रहस्य का सहारा लेना पड़ता है। अज्ञेय अपनी 'रहस्यवाद' नामक कविता में कह रहे हैं कि, उनके रहस्यवाद का संबंध ईश्वर से नहीं है -

“मैं भी एक प्रवाह में हूँ -  
लेकिन मेरा रहस्यवाद ईश्वर की ओर  
उन्मुख नहीं है  
मैं उस असीम शक्ति से संबंध जोड़ना



चाहता हूँ  
अभिभूत होना चाहता हूँ -  
जो मेरे भीतर है।  
शक्ति असीम है - मैं शक्ति का एक अणु हूँ  
मैं भी असीम हूँ।”<sup>38</sup>

अर्थात् अज्ञेय शक्ति की तलाश किसी बाहरी दुनिया में नहीं करते बल्कि वे शक्ति का स्रोत अपने अन्दर ही देखते और स्वीकारते हैं। राममूर्ति त्रिपाठी कहते हैं कि, “अज्ञेय यद्यपि सचेत होकर घोषणा करते हैं कि, उनका रहस्यवाद ‘ईश्वर’ की ओर नहीं जाता - अर्थात् जो कुछ चिंतन के दरम्यान अनुभव ग्रंथियां उलझी रह जाती है, उन्हें वे ‘ईश्वर’ नाम नहीं देना चाहते - तथापि रहस्यवाद के मूल चेतना से कोई फर्क नहीं पड़ता। ‘ईश्वर’ संज्ञा देने से उन्हें लगता है - पुरानी जोती हुई जमीन की गंध आ जाएगी - उनकी मनःस्थिति से न्याय नहीं होगा। रहस्यवाद की मूल भावना यही है कि प्रतीत बुद्धि की पकड़ में नहीं आता, सीमा को असीम से जोड़ता है।”<sup>39</sup> डॉ० रामविलास शर्मा उन कवियों को भी इस परम्परा से जोड़ते हैं जो खुद को प्रगतिवादी घोषित करते हैं जैसे मुक्तिबोध और शमशेर बहादुर सिंह। नंदकिशोर नवल अपने आलेख ‘रहस्यवाद का आलोक’ में इस बात की पुष्टि करते हैं कि, “डॉ० रामविलास शर्मा उन्हें अस्तित्ववाद से ही नहीं, रहस्यवाद से भी प्रभावित बतलाते हैं।”<sup>40</sup>

रहस्यवाद एक प्रवाहमान धारा है। जब तक यह प्रकृति रहेगी कुछ बातें बुद्धि बोध की परिधि से बाहर रहेगी और हमारी जिज्ञासा उसके प्रति अनवरत जिज्ञासु बनी रहेगी। तब तक रहस्यवाद अपनी गति से चलती रहेगी। नव्य रहस्यवाद आधुनिक और व्यवहारिक व्याख्या को लेकर चला है, जहाँ वह निवृत्तिमूलक चिंतन से लौकिक प्रवृत्तिमूलक चिंतन की ओर प्रवृत्त हुआ है। व्यवहारिक दर्शन इसके मूल आधार है। भाववाद के साथ पाश्चात्य भौतिकवाद

का समन्वय हुआ है। इसमें सिद्धांत की जगह व्यवहारिकता, परलौकिकता की जगह ईह्लौकिकता, विश्वास की जगह वैज्ञानिकता और निर्वाण की जगह संसार को प्रधानता दी गयी है। आदर्शवादी लक्ष्य को जीवन का मानदंड न मानकर व्यवहारिक जीवन के प्रति रचनाकार सजग हुआ है। प्रसाद 'कामायनी' में लिखते हैं -

“तप नहीं केवल जीवन - सत्य  
करुण यह क्षणिक दीन अवसाद,  
तरल आकांक्षा से है भरा -  
सो रहा आशा का आह्लाद।”<sup>41</sup>

आधुनिक कवि कह रहा है कि, तप ही जीवन का लक्ष्य नहीं है। मध्यकालीन रहस्यवाद लोकधर्मी नहीं था लेकिन आधुनिक रहस्यवाद व्यवहारिकता के कारण ही लोकधर्मी है इसलिए यह नव्य है।

### निष्कर्ष -

काल गतिशील है। परिवर्तन परम सत्य है। परिस्थितियाँ बदलती हैं। रहस्य भावना इससे कैसे अछूता रह सकता है। परिणामतः इसके नये - नये रूप सामने आते रहे हैं। महादेवी एवं रवीन्द्रनाथ के काव्य में रहस्यवाद को पोषण - प्राप्त होता रहा, इसमें संदेह नहीं। इसके विभिन्न रूपों का सशक्त चित्रण दोनों के काव्य में मौजूद है जिसकी विवृति व विश्लेषण अभिप्रेत है।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ० - भूमिका
2. रहस्यवाद, राममूर्ति त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1998, पृ० - 41
3. हिंदी साहित्य कोश (भाग -1), संपादक - धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजेश्वर वर्मा, धर्मवीर भारती, रामस्वरूप चतुर्वेदी, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, पृ० - 535
4. Oxford dictionary
5. Shorter oxford dictionary
6. Shorter oxford dictionary
7. संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर, रामचन्द्र वर्मा द्वारा मूल संपादित, नागरी प्रचारणी सभा काशी, 1971, पृ० - 856-857
8. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ० - 38
9. हिंदी साहित्य का इतिहास, आ० रामचन्द्र शुक्ल, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ० - 398
10. कबीर का रहस्यवाद, डॉ० रामकुमार वर्मा, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1966, पृ० - 406
11. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (द्वितीय खण्ड), गणपतिचंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, दसवां संस्करण - 2006, पृ० - 73
12. काव्य और कला तथा अन्य निबंध, जयशंकर प्रसाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण - 2016, पृ - 31
13. यामा, महादेवी, किताबिस्तान, इलाहाबाद और लंदन, 1939, पृ० - 8

14. रहस्यवाद, राममूर्ति त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1998, पृ०-48
15. छायावाद और रहस्यवाद, गंगाप्रसाद पाण्डेय, सेतु प्रकाशन, दिल्ली, 1968, पृ० - 68
16. संचयन, रवीन्द्र रचनावली खण्ड (18), पृ० - 416
17. रहस्यवाद, राममूर्ति त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1998, पृ० - 34
18. महादेवी साहित्य (खण्ड - 4), संपादक - निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007, पृ - 419
19. रवीन्द्रनाथ टैगोर रचनावली (कविता भाग-2), प्रधान संपादक-इन्द्रनाथ चौधुरी, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, 2014, पृ० - 140
20. महादेवी साहित्य (खण्ड-1), संपादक - निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007, पृ० - 183
21. रहस्यवाद और हिंदी काव्य - साहित्यिक निबंध, डॉ गणपतिचंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1981, पृ० - 471
22. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां, नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ० - 41
23. रवीन्द्रनाथ टैगोर रचनावली (खण्ड - 5) , प्रधान संपादक - इन्द्रनाथ चौधुरी ,सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण - 2014 , पृ० - 95
24. रहस्यवाद, राममूर्ति त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1998, पृ० - 41

25. रवीन्द्रनाथ की कविताएँ, अनुवादक - हजारी प्रसाद द्विवेदी, हंस कुमार तिवारी, रामधारी सिंह दिनकर, भवानीप्रसाद मिश्र, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1982, पृ० - 311
26. वही, पृ० - 313
27. महादेवी : नया मूल्यांकन, गणपतिचंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008, पृ० - 168
28. वही, पृ० - 168
29. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ रामकुमार वर्मा, प्रकाशक - रामनारायणलाल विजय कुमार, इलाहाबाद, 1985, पृ० - 69-70
30. साहित्यिक निबंध, आ० रामचन्द्र शुक्ल, पृ० - 408
31. भागवतगीता, टीकाकार - जयदयाल गोयन्दका, गोविन्द भवन कार्यालय, गीताप्रेस, गोरखपुर, पैंतालीसवां संस्करण - सं० 2053, पृ० - 55
32. संत काव्य, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, किताब महल, इलाहाबाद, 2001, पृ० -27 (भूमिका)
33. हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ० - 384
34. चिंतामणि (भाग - 2), आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 2009, पृ० - 120
35. साहित्यिक निबंध, आ० रामचन्द्र शुक्ल, पृ० - 405
36. महादेवी का विवेचनात्मक गद्य, गंगा प्रसाद पाण्डेय, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, 1972, पृ० - 61
37. महादेवी साहित्य (खण्ड-4), संपादक - निर्मला जैन, पृ० - 432
38. चुनी हुई कविताएँ, अज्ञेय, संपादक - कन्हैयालाल नंदन (भाग- 1), पृ०-20
39. रहस्यवाद, राममूर्ति त्रिपाठी, पृ० - 25

40. मुक्तिबोध : ज्ञान और संवेदना, नंदकिशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ० - 196
41. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, अनुपम प्रकाशन, पटना, 2011, पृ०-30
-